6

पूर्वोत्तर के सन्त शंकरदेव का भक्ति आन्दोलन में योगदान

श्वेता कुमारी एवं नीलम गर्ग***

पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक एवं धार्मिक धारा में सन्त शंकरदेव का स्थान अत्यन्त विशिष्ट है। उन्होंने भक्ति आन्दोलन को केवल धार्मिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य से भी नई दिशा प्रदान की। शंकरदेव ने 'एकशरण धर्म' के माध्यम से वैष्णव भक्ति को जनसाधारण तक पहुँचाया तथा समाज में जातिगत ऊँच-नीच, अन्धविश्वास एवं विभाजनकारी प्रवृत्तियों को चुनौती दी। भक्ति आन्दोलन में उनका योगदान केवल धार्मिक पुनर्जागरण तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उन्होंने सामाजिक समरसता, सांस्कृतिक नवजागरण एवं नैतिक उत्थान का मार्ग प्रशस्त किया। शंकरदेव का प्रयास भारतीय भक्ति परम्परा को क्षेत्रीयता से ऊपर उठाकर अखिल भारतीय स्तर पर जोड़ने वाला सेतु सिद्ध हुआ। अतः यह शोधपत्र उनके जीवन, विचार एवं कार्यों के आलोक में भक्ति आन्दोलन में उनकी बहुआयामी भूमिका का विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

[**प्रमुख शब्द :** पूर्वोत्तर भारत, भक्ति आन्दोलन, नामघर, एकशरण धर्म, सामाजिक समानता, धार्मिक समरसता।]

पूर्वोत्तर भारत में भक्ति आन्दोलन के पुरोधा सन्त शिरोमणि भक्तकवि शंकरदेव का जन्म 1449 ई॰ में आश्विन शुक्ल पक्ष विजयादशमी को मध्य असम के नगाँव जिले के आलिपुखरी गाँव में हुआ। असाधारण एवं बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी शंकरदेव का जीवन केवल भक्त

* **शोधार्थी, हिन्दी विभाग, शम्भु दयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)।**

** **प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, शम्भु दयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)।**

और कवि के रूप में सीमित न होकर साहित्यकार, कलाकार, नाटककार, चित्रकार, वादक, गायक, आदि प्रदर्शनकारी कला तक विस्तार लिए हुए है। अपने असाधारण प्रतिभा एवं कौशलता के बल पर शंकरदेव ने समाज को धर्म, संस्कृति, संस्कार एवं नैतिक मूल्य के साथ ही भक्ति का सरल और सुगम विकल्प प्रदान किया जो न केवल असम की तदयुगीन जनता के लिए, अपितु भविष्य के लिए भी दिशादायी बना। डॉ0 कृष्ण नारायण प्रसाद शंकरदेव के साहित्यिक व सांस्कृतिक योगदान को इन शब्दों में परिभाषित करते हैं—''शंकरदेव न केवल भक्ति परम्परा के महान कवि थे, अपितु एक श्रेष्ठ साहित्यकार, नाटककार, गायक, नृत्यकार, गीत-रचनाकार, चित्रकार, वादक तथा अभिनेता थे। एक महाकवि के रूप में शंकरदेव की रचनाओं का असम व पूर्वोत्तर प्रदेशों के निवासियों पर गहरा प्रभाव पड़ा। शंकरदेव ने वैष्णव भक्ति काव्य को असम में नई दिशा प्रदान की। इसी कारण उन्हें युग प्रवर्तक भी कहा गया। उनके प्रयासों के कारण ही नृत्य, नाटक तथा संगीत में कृष्ण भक्ति को नवल गति, लय व ताल मिली जो धीरे-धीरे असम के लोगों के तन-मन में बस गयी।''[1] असम को एकता के सूत्र में पिरोते हुए शंकरदेव ने व्यक्ति एवं समाज, भक्ति एवं अध्यात्म, सगुण एवं निगुर्ण तथा कला एवं साहित्य का अद्‌भुत सामंजस्य हमारे समक्ष प्रस्तुत किया जो तुलसीदास की भाँति समन्वय की विराट चेतना पर आधारित था। उनके विशिष्ट व्यक्तित्व के कारण ही असम के कला, भाषा, साहित्य, धर्म और सामाजिक जीवन पर उनका प्रभाव परिलक्षित हुआ है। अतः यह कहना अतियुक्ति नहीं होगी की शंकरदेव के बिना असमिया भाषा, साहित्य, संस्कृति एवं भक्ति के अखिल भारतीय स्वरूप को समझा जा सकता है। बानीकांत श्रीमंत शंकरदेव के व्यक्तित्व के सन्दर्भ में लिखते हैं—''Shankardeva had given Assama new life, letters and a State Rulers have come and gone and their kingdom perished in the dust, but Shankardevas state endures and broad in general heart of men his power survives.''[2]

शंकरदेव का साहित्य सृजन संसार विस्तृत था जो उनके भ्रमणशील एवं बहुआयामी व्यक्तित्व का परिचायक है। उन्होंने कृष्ण को आराध्य मानकर भक्ति के माध्यम से अमर साहित्य की रचना की। शंकरदेव संस्कृत के विद्वान थे। उन्होंने संस्कृत में अपनी लेखनी चलाई किन्तु अपने साहित्य को आमजन तक पहुँचाने के लिए उन्होंने स्थानीय भाषा का प्रयोग किया। असमिया एवं ब्रजबुली में साहित्य का सृजन कर शंकरदेव ने सामान्य जन तक अपनी बात पहुँचाई। परिणामस्वरूप उनकी कृति सामान्य जन के ह्रदय का कंठाबर बनी और शंकरदेव को सन्त का दर्जा प्राप्त हुआ। उनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं—संस्कृत में 'भक्ति रत्नाकर', 'तोटय' और असमिया में 'उत्तरकाण्ड (रामायण)', 'महाभागवत', 'हरिश्चंद्र उपाख्यान', 'रूकमणि छरण', 'कीर्तन-घोषा', 'गुणमाला' और 'भक्तिप्रदीप'। ब्रजबुली में 'बरगीत', भाटिया आदि। डॉ0 मगध शंकरदेव के सृजन संसार के बारे में कहते हैं—''शंकरदेव की रचनाओं की विपुल राशि पर विचार करने से विदित है कि वे अपने आप में एक संस्था थे। उनकी प्रतिभा बहुमुखी थी। वे संस्कृत के विद्वान एवं अनुभव के धनी थे। वस्तुतः उनकी पूँजी है अनुभव एवं

वैष्णव शास्त्रों का अध्ययन, जिसकी अभिव्यक्ति उनकी रचनाओं में हुई है। इसके लिए मानक बनी है जीवन को समग्रता में देखने वाली उनकी भारतीय दृष्टि। इसलिए जहाँ एक ओर परम्परा से प्राप्त समस्त काव्यरूपों और काव्यशैलियों को उन्होंने स्वीकृत किया, वहीं दूसरी ओर कतिपय नवीन विधाओं और पद्धतियों को आविष्कृत-प्रचलित।''[3] इस प्रकार हम कह सकते है कि शंकरदेव के रचना संसार का फलक विस्तृत है जो परम्परागत रूप शैली एवं यात्रा के साथ-साथ नवीन रूप, शैली और भाषा का सृजन भी करता है। सामान्य जनता के लिए ब्रजबुली भाषा का प्रयोग इसका अच्छा उदाहरण है। बहुमुखी व्यक्तित्व के धनी शंकरदेव का सृजनात्मक एवं रचनात्मक कर्म भी विविधगुणी है।

शंकरदेव के सृजनात्मक एवं रचनात्मक कार्य का समय मध्यकाल था, जिसे यूरोप में अन्धकारकाल के नाम से जाना गया। यह वह समय था जब यूरोप की जनता पोप के वर्चस्व के अधीन, अधिकारहीन जीवन व्यतीत करने के लिए विवश हो रही थीं। वहीं दूसरी ओर, भारत में यूरोप के विपरीत भक्ति की अलख अखिल भारतीय स्तर पर प्रज्वलित हो रही थी, जिसका मूल आधार मानवीय मूल्य एवं धर्म को स्थापित कर समाज में समता एवं समानता का नया अध्याय रचना था और यह अध्याय सभी सन्त कवियों द्वारा बखूबी रचनात्मक लेखनी से रचा गया, जिसे हम भक्ति आन्दोलन एवं स्वर्णकाल के नाम से जानते है। मानवीय संवेदना की धरातल पर उपजा यह आन्दोलन केवल उत्तर भारत तक सीमित न रहकर अखिल भारतीय स्तर पर आगे बढ़ा तो पूर्वोत्तर भारत इससे कैसे अछूता रह सकता था। भक्ति के इस संवेदनामयी चेतना को पूर्वोत्तर भारत में विकसति करने का कार्य असम के सन्त शंकरदेव ने किया। ''शंकरदेव ने असम और पूर्वोत्तर में अकेले वह काम किया जो हिन्दी के क्षेत्र में रामानंद, वल्लव, कबीर, सूर, तुलसी आदि के समन्वित प्रयास से संपन्न हुआ। उनके व्यक्तित्व की विलक्षणता और विशालता को ठीक ही अध्ययताओं ने अद्वितीय कहा है।''[4]

मानवीय संस्कृति पर आधारित भक्ति की संवेदनामयी चेतना भक्तिकाल में मौजूद तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक विषम परिस्थिति और राजनीतिक उथल-पुथल की देन थी। इस अराजक परिस्थिति में शंकरदेव ने असम की जनता को नयी दृष्टि प्रदान की। यह वह समय था जब असम की जनता किसी केन्द्रीय सत्ता के अभाव में अधिकारहीन होकर विभाजन, विखण्डन लूट-पाट, हत्या, असुरक्षा एवं अशान्ति का दंश झेल रही थी। विभिन्न राजाओं से शासित एवं शोषित असमिया समाज विविधता में एकता की अवधारणा के विपरीत बिखराव की धारणा को साकार कर रहा था। यह बिखराव न केवल राजनीतिक स्तर तक सीमित था बल्कि सामाजिक और धार्मिक स्तर पर भी था। विविध जनजातीय समुदाय का प्रतीक असमिया समाज विभिन्न कर्मकाण्ड, जात-पात, आडण्बर, तन्त्र-मन्त्र आदि में उलझा हुआ था। ऐसे में असम को नये मानवतावादी समझ की दरकार थी, जो असमिया समाज को बन्धुत्व एवं सौहार्द का पाठ पढ़ा सके। इस विषम एवं विकट परिस्थिति में असम में सामाजिक समानता स्थापित करने के लिए शंकरदेव ने नामधर एवं सत्रों को स्थापित किया जो भक्ति के माध्यम से सामाजिक समानता का परिचायक था। यह नामधर एवं सत्र सामान्य मनुष्य के लिए धर्म, भक्ति, आशा एवं आकांक्षा का

नवीन बोध था, जिसने सामाजिक प्रतिबद्धताओं एवं परम्परागत जड़तारूपी मूल्य के विरूद्ध धार्मिक सौहार्द और मानवीय मूल्य का सृजन किया। डॉ0 कृष्ण गोपाल के अनुसार— ''शंकरदेव जी ने नामधरों तथा सत्रों की स्थापना की, महँगे तथा खर्चीले मन्दिर बनाने के स्थान पर गाँव के लोगों की सहायता से भी बिना दीवार का बाँस के सहारे, फूस आदि से छाया हुआ नामधर ही ग्राम की सभी धार्मिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों का केन्द्र बन गया। इस नामधर में किसी मूर्ति की स्थापना नहीं थी। गाँव के सभी जातियों के स्त्री-पुरूष मिलकर इन नामधरों में भजन-कीर्तन आदि करते थे। ऐसे हजारों नामधर आज भी असम में लोकसंस्कार के कार्य में रत है। उन्होंने भक्त की तरह जीवन यापन करने वाले व्यक्ति को सत्राधिकारी बनाने का चलन चलाया।''[5] शंकरदेव का नामधर आज भी असमिया समाज को अपने परम्परागत स्वतन्त्र मूल्यों से समृद्ध कर रहा है। स्वयं शंकरदेव कृष्ण भक्ति के लिए नामधर के सन्दर्भ में लिखते हैं— ''कृष्ण सूर्य भैलंत उदिता। नाम धर्म कुरीला विदिता।''[6] स्पष्ट है कि शंकरदेव ने भक्ति को अभिजात्य वर्ग की सत्ता से बाहर लाकर सामान धरातल पर सभी वर्गो के लिए भक्ति का एक विकल्प प्रस्तुत किया, जिससे सप्मूर्ण पूर्वोत्तर में भक्ति की नवीन चेतना की ज्योति जगमगाने लगी।

पूर्वोत्तर भारत में भक्ति आन्दोलन के अग्रदूत शंकरदेव ने भक्ति की प्रेरणा 'श्रीमद्भागवत पुराण' से ग्रहण कर कृष्ण को आराध्य माना और एकशरण धर्म की स्थापना कर वैष्णव धर्म को प्रतिष्ठित करने का कार्य किया। यह धर्म सभी वर्ग के लोगों के लिए सामान था जिसे कोई भी अपना सकता था। शंकरदेव के एकशरण धर्म को हम शंकराचार्य के अद्वेतवाद से भी जोड़ कर समझ सकते है, जिस प्रकार शंकराचार्य ने बहुदेववाद का विरोध कर एक ही व्रत को सत्य माना, ठीक उसी प्रकार शंकरदेव ने एकशरण धर्म की स्थापना कर एकमात्र कृष्ण को ही परम आराध्य के रूप में स्वीकार किया, कृष्ण ही सबको संसाररूपी भवसागर से तारने वाले परमब्रह्म है—

''एके कृष्ण देव करियोक सेव
धरियों ताहन नाम।
कृष्ण दास हुआ प्रसाद मुंजिया
हस्ते करा तान काम।।''[7]

एकशरण धर्म की स्थापना कर शंकरदेव ने असम में नवीन नैतिक मूल्य और प्रेम सद्भावना को बढ़ावा दिया और सामाजिक समानता का नया पथ आलोकित किया। डॉ0 मगध एकशरण धर्म के सन्दर्भ में लिखते हैं—''शंकरदेव के इस महान आन्दोलन ने जीवन को नया और व्यापक दृष्टिकोण दिया और सामाजिक आचरण को स्पष्टतः स्वस्थ्य स्वरूप प्रदान किया।''[8] तदयुगीन समाज में प्रचलित भक्ति के कठोरता साधना पद्धति का विरोध कर शंकरदेव ने अराधना के सरल एवं सहज मार्ग पर बल दिया, जिसमें तप, तपस्या, तीर्थ, व्रत, योग का खण्डन कर केवल भक्ति को सर्वोपरि माना गया। यथा—

''तीरथ वरत तप जप याग योग मुकुती।
मन्त्र परप धरम करम करत नाही युकुती।।''[9]

बाह्यआडण्बर का विरोध कर शंकरदेव ने असमिया समाज को ईश्वर प्राप्ति का सहज मार्ग दिखाया जो सबके लिए सुगम था। शंकरदेव का जन्म कायस्थ परिवार में हुआ था, किन्तु उन्होंने कभी भी अपनी जाति पर अभिमान नहीं किया। जाति-पाति, ऊँच-नीच, वर्गों में विभाजित समाज का उन्होंने विरोध किया और शूद्रों, दलितों के उद्धारक बनकर धार्मिक सौहार्द के लिए समानता का सेतु निर्मित किया। लक्ष्मीशंकर के अनुसार—''इन्होंने अपने सम्प्रदाय में कोई जातिगत भेदभाव नहीं रखा और सम्पूर्ण समाज को एक पथ का अनुयायी बनाकर मनुष्य मात्र में समानुभूति उत्पन्न करने की चेष्टा की। उनकी इस दृष्टि का स्पष्ट चित्रण निम्नलिखित गीत में दिखाई देता हैं—

''किरात, कुठारी, खासी, गारी, मोरी, यवन, कंक, गोवल।
असम मुलुक, रजक तुरक, कवँछा, मलेछ चांडाल।।
आन पापी, नर कृसन सेवा कर संगते पवित्र छय।
भक्ति लभिया, संसार तरिया, बैकुंठ सूखे चलय।।''[10]

शंकरदेव ने सामाजिक रूप से हाशिए पर पड़ें लोगों को अपने सम्प्रदाय में महंत और भक्त बनाकर अभिजात्य वर्ग को करारा जवाब दिया। उनका मानना था कि एक दिन ऐसा भी आएगा जब सामाजिक रूप से दबा-कुचला दलित वर्ग कृष्ण भक्ति के माध्यम से उच्च-वर्ग के समान होंगे। यथा—

''ब्राह्मण, क्षत्रीय, वेश्य इटो तीनि जाति।
न सुनिबे छरि भकलिक कानपाति।।
शूद्र सबो अनेक कैवर्तआदि करि।
अंत्यजे पर्यन्त भजिबेक महाहरि।।
अंप्रायसे लभिब ईश्वर महाज्ञान।
एतेके कलित शूद्र कैवर्त प्रधान।।''[11]

इस प्रकार हम देखते हैं कि शंकरदेव केवल रचनाकार और भक्त न होकर समाज सुधारक के रूप में सामाजिक व्यवस्था को दुरूस्त करते हैं, जो तदयुगीन समाज के लिए अत्यन्त आवश्यक था। सांवरमल सांगेनरिया के शब्दों में—''शंकरदेव केवल आध्यात्मिक और धार्मिक प्रचार में ही व्यस्त नहीं थे अपितु उन्होंने भेदभावहीन समाज का पुनर्गठन कर सभी समाज के लोगों को एक सूत्र में पिरोकर वृद्ध समाज की स्थापना की। यह उनके चिंतन और मनन का ही प्रभाव है कि आज असमिया समाज में कोई छुआछूत या जातिभेद देखने को नहीं मिलता। तभी तो अपने असम प्रवास के समय यह बात जानकर गाँधी जी ने अचंभित होते हुए कहा था कि अस्पृश्यता के जिस कोढ़ को समाज से मिटाने के लिए मैं प्रयासरत हूँ, वह पहले से ही श्रीमंत शंकरदेव ने असमिया समाज से मिटा दिया।''[12]

निष्कर्ष

अतः शंकरदेव की वाणी भारत के प्रसिद्ध सन्त कबीर, तुलसी, नानक, नामदेव, रैदास एवं सूर आदि की भाँति ही सामाजिक समानता का साहित्य है जिसमें समाज में व्याप्त विसंगतियों का विरोध कर मानवीय मूल्यों को प्रतिष्ठित करने का कार्य किया गया है। आज भी सिरमौर शंकरदेव भक्ति आन्दोलन के सच्चे लोकनायक के साथ-साथ असम के सन्त शिरोमणि के रूप में प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित है, जिन्होंने भक्तिकाल को नया और व्यापक दृष्टिकोण दिया और नामधर एवं सत्रों जैसी अवधारणा के रूप में मानवीय सद्भावना का नया अध्याय रचा जो तदयुगीन समय में दुर्लभ कार्य था। उनकी रचनाओं, नाट्यकला, संगीत एवं प्रवचनों ने न केवल असम, बल्कि सम्पूर्ण पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक चेतना को एक नई पहचान दी। शंकरदेव ने जनता में यह भाव जागृत किया कि सच्ची भक्ति वही है, जिसमें करूणा, समता एवं मानवता का भाव हो। उन्होंने समाज के उपेक्षित एवं शोषित वर्ग को भी भक्ति आन्दोलन से जोड़ा, जिससे सामाजिक समरसता की धारा प्रबल हुई।

अतः यह कहा जा सकता है कि शंकरदेव का भक्ति आन्दोलन केवल आध्यात्मिक साधना का मार्ग न होकर सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन का भी सूत्रधार था। उनके विचार एवं योगदान आज भी पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक धरोहर के रूप में जीवन्त हैं और भारतीय भक्ति परम्परा को समृद्ध करने वाले अमर स्तम्भ के रूप में स्थापित हैं।

सन्दर्भ-सूची

1. डॉ0 कृष्ण नारायण प्रसाद मागध, **महाकवि शंकरदेवः विचारक एवं समाज सुधारक**, भूमिका से।
2. बानीकांत, *Aspects of Early Assamese Literature*, पृ0सं0 122.
3. डॉ0 कृष्ण नारायण प्रसाद मागध, **महाकवि शंकरदेवः विचारक एवं समाज सुधारक**, पृ0सं0 35.
4. **आलोचना त्रैमासिक**, जनवरी-मार्च 2008, पृ0सं0 23.
5. डॉ0 कृष्णगोपाल, **प्राग्ज्योतिष क्षेत्र की समरसता के उन्नायकः श्रीमंत शंकरदेव**, समन्वय पूर्वोत्तर, नवंबर-जनवरी 2017, पृ0सं0 5.
6. **कीर्तन घोषा, शंकरदेव**।
7. *Egyankosh*, पृ0सं0 63.
8. डॉ0 कृष्ण नारायण प्रसाद मागध, **महाकवि शंकरदेवः विचारक एवं समाज सुधारक**, पृ0सं0 462-463.
9. *Egyankosh*, पृ0सं0 63.
10. लक्ष्मीशंकर गुप्त, **महापुरूष शंकरदेव ब्रजबुली ग्रंथावली**, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयागराज, संस्करण 1975, पृ0सं0 15.
11. **भागवत, द्वादश स्कंध**।
12. सांवरमल सांगेरिया, **लोहित के मानसपुत्र**, पृ0सं0 65.

★

https://doi.org/10.62047/JNDH.2025.10.31.51